International Journal of Jyotish Research: 2017; 2(2): 05-06

International Journal of Jyotish Research
(वेदचक्षु)

ISSN: 2456-4427
Impact Factor: RJIF: 5.11
Jyotish 2017; 2(2): 05-06
© 2017 Jyotish
www.jyotishajournal.com
Received: 03-05-2017
Accepted: 06-06-2017

डॉ0 सुशीला कुमारी
सहायक प्रवक्ता, संस्कृत विभाग,
महिला महाविद्यालयए झोझूकलां,
चरखीदादरी, हरियाणा, भारत

Correspondence
डॉ0 सुशीला कुमारी
सहायक प्रवक्ता, संस्कृत विभाग,
महिला महाविद्यालयए झोझूकलां,
चरखीदादरी, हरियाणा, भारत

आधुनिक युग में वैदिक शिक्षा का औचित्य

डॉ0 सुशीला कुमारी

प्रस्तावना

वैदिक शिक्षा को देखने मात्र से ही यह पता चलता है कि यह वस्तुतः प्राचीनता पर आधारित है इसलिए यह प्रगति विरोधी लगती है और आधुनिक युग की दृष्टि में सर्वथा हेय एवं त्याज्य भी प्रतीत होती है, किन्तु यह सर्वथा अनुचित है। क्या कोई वस्तु पुरानी होने पर प्रयोग योग्य नहीं होती है? यदि प्राचीनता सम्बन्धी तर्क स्वीकार कर लिए जाएगें तो हरेक प्राचीनतावादी विचार, धारणाएँ, इतिहास, व्यवस्था एवं उपलब्धि को प्रगति विरोधी घोषित करना पड़ेगा। वस्तुतः इस तर्क का मूलाधार काल सम्बन्धी परिवर्तनों से है जो इस मूल विश्वास की देन है कि उत्तरोत्तर होने वाले परिवर्तन अनिवार्यतः प्रगतिगामी भी होगें।

परन्तु क्या यह वास्तवः में सत्य है? वस्तु स्थिति पर विचार करने से पता चलता है कि परिवर्तनों के अनेक कारण होते हैं। यथा–प्राकृतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिकादि। इसके विपरीत उपर्युक्त परिवर्तनों के विषय में यह भी कहा जा सकता है कि उनमें प्रगति एवं पतन की प्रक्रिया प्रायः विद्यमान रहती है। अतः यह धारणा कि परिवर्तन सदैव प्रगति के सूचक हैं और वर्तमान सदैव अतीत से श्रेष्ठ एवं प्रगति का सूचक है नितान्त मिथ्या है। इसलिए वैदिक शिक्षा के मात्र प्राचीनतावादी होने के कारण प्रगति विरोधी घोषित नहीं किया जा सकता। अनेक आधुनिक विश्वप्रसिद्ध विचारक इन समस्याओं के समाधान हेतु प्राचीन धर्मग्रन्थ यथा–वेद, उपनिषद्, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत, पुराण, जिनवाणी, बाईबिल और कुरान आदि में वर्णित मानवतावादी शान्तिवादी शिक्षाओं की ओर आशा की दृष्टि से देख रहे हैं।[1] इसके अतिरिक्त आज मानवजाति आधुनिक सुविधा एवं भोगविलास जीवनशैली के कारण हृदय, शुगर, मानसिक तनाव, मोटापा, अनिद्रा, आलस्य आदि अनेक जटिल रोग रूपी समस्याओं से जूझ रही है। इस चुनौतीपूर्ण परिस्थिति में वेद, उपनिषद्, भगवद्गीता, रामायण, पातजंल योग एवं हठयोग सम्बन्धी ग्रन्थों में वर्णित योगविद्या आज सम्पूर्ण मानव जाति के लिए वरदान हो रही है।[2] इसी तरह आधुनिक चिकित्सा पद्धति के मंहगे एवं दुष्प्रभावी पहलू से बचाव के लिए मानव जाति तेजी से आयुर्वेद, यूनानी पद्धति, तिब्बतन आदि परम्परागत चिकित्सा पद्धतियों की ओर अग्रसर हो रही है।[3] भारत ही नहीं अमेरिका सहित यूरोप के चिन्तक आधुनिक की अपेक्षा प्राचीन यूनानी दार्शनिकों–सुकरात, प्लेटो ओर अरस्तु के मार्गदर्शनकारी विचारों की उपयोगिता को पुनः–पुनः देखा जा रहा है।[4]

अतः वैदिक शिक्षा को मात्र प्राचीन होने के कारण अप्रासंगिक, प्रगतिविरोधी एवं प्राचीन नहीं माना जा सकता। विशेषकर वैदिक शिक्षा को। नैतिक विचारों एवं जीवनमूल्यों पर आधारित होने के कारण अन्य युगों की भाँति वर्तमान समय में भी प्रासंगिक एवं अनुकरणीय है।[5] चारों वेद परब्रह्म परमेश्वर से उत्पन्न हुए हैं। इन वेदोक्त प्रमाणों के अतिरिक्त श्वेताश्वरोपनिषद्, मनुस्मृति, सांख्यसूत्र, ब्रह्मसूत्र और वैशेषिक सूत्र आदि आर्ष ग्रन्थों में भी वेदों को सनातन, ईश्वरीय ज्ञान का ग्रन्थ स्वीकार किया गया है।[6] इसी कारण योगसूत्रकार ने ईश्वर को गुरूओं के भी आदिगुरू के रूप में परिभाषित किया है।[7] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वैदिक शिक्षा कोई सामान्य शिक्षा न होकर ईश्वरीय ज्ञान के आधारभूत ग्रन्थों पर आधारित है। वस्तुतः व्यक्ति की औसत आयु का पहला चौथाई भाग वैदिक शिक्षा सम्बन्धी उपर्युक्त व्यापक पाठयोजना की पूर्ति हेतु पूर्णतः समर्पित हो जाता है। आयु की इस प्रथम अवस्था को ब्रह्मचर्याश्रम के नाम से जाना जाता है जो सामान्यतः 25 वर्ष की आयु पर्यन्त चलता है।[8] यद्यपि इस आश्रम का अधिकांश समय गुरूकुल/विद्यालय में अध्ययन के लिए पूर्ण हो जाता है। गुरू/आचार्य जिसका मुख्य व्यवस्थापक एवं केन्द्र होता है। गुरूकुल जीवन की सम्पूर्ण गतिविधियाँ गुरू पर ही केन्द्रित होती है। वेद का कथन है कि 'शतधारमुत्समक्षीयमाणम्' अर्थात् आचार्य ज्ञान की सौ धाराओं वाला अक्षय स्त्रोत होता है। इसलिए वैदिक शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत गुरू शिष्य का यज्ञोपवीत संस्कार करके तीन रात्री पर्यन्त अपने गर्भ में धारण करता है फिर जब वह शिष्य के रूप में जन्म लेता है तब देवजन उसके दर्शन के लिए एकत्रित होते हैं।[9]

वैदिक शिक्षा के अन्तर्गत गुरू की महत्ता इतनी अधिक होती है कि विद्या अर्जन के पश्चात् जब ब्रह्मचारी कर्म क्षेत्र में प्रवेश करता है तो वह अपने कुल, गोत्रादि के साथ आचार्य का नाम भी अपनी विशिष्ट पहचान के रूप में प्रस्तुत करता है।[10] इसका कारण यह प्रतीत होता है कि वैदिक शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षार्थी के सर्वांगीण विकास का मुख्य उत्तरदायित्व उसके शिक्षक का होता है जो शिष्यों के प्रति सन्तानवत् स्नेह करता है। इसलिए वैदिक व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षण केन्द्र को गुरूकुल या आचार्य कुल के नाम से जाना जाता है जहाँ केवल गुरू की सत्ता का प्रधान्य होता है।[11]

वैदिक शिक्षा के प्रसंग में अधिकारी–अनाधिकारी के विषय में प्रश्न भी विशेष रूप से विचारणीय हैं यथा–वर्तमान युग में शिक्षा के वैश्वीकरण एवं बाजारीकरण का युग प्रारम्भ हो चुका है। इस दौर में शिक्षा दिन–प्रतिदिन महंगी होती जा रही है इसलिए शिक्षा विशेषकर उच्च शिक्षा पाने का अवसर उन्हीं लोगों तक सीमित होता जा रहा है जो महंगी शिक्षा को खरीद सकने में समर्थ हैं।[12] परन्तु मध्यकालीन भारत में शिक्षा का एकमात्र कारण था–जन्मगत आधार व्यवस्था के विकृत हो जाने और जातिप्रथा के अस्तित्व में आ जाना। उस दौर में शूद्र व स्त्री दोनों समुदायों को यह कहते हुए शिक्षा पाने के अधिकार से सर्वथा वंचित रखा गया कि 'स्त्रीशद्रौनाधीयातामिति श्रुतिः' अर्थात् स्त्री व शूद्र न पढ़ें, यह श्रुति है।[13] किन्तु शिक्षा पाने के अधिकार के विषय में वैदिक दृष्टिकोण समानतावादी है। इसलिए मानव मात्र को बिना किसी आर्थिक या सामाजिक भेदभाव के शिक्षा पाने का अधिकार वेदों में दृष्टिगोचर होता है। जैसा कि यजुर्वेद के विभिन्न मन्त्र पर दृष्टपात करने से प्रतीत होता है–

'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।।[14]

यहीं समानतावादी वैदिक दृष्टिकोण शिक्षा सम्बन्धी प्रासंगिक सुविधाओं के क्षेत्र में भी दृष्टिगोचर होता है जैसा कि ऋषि दयानंद के इस कथन से विदित होता है कि सबको तुल्य वस्त्र, खान–पान, आसन दिए जाएं, चाहे वह राजकुमार, दरिद्र एवं तपस्वी ही क्यों न हो।[15]

निष्कर्षत

वैदिक शिक्षा की प्रमुख विशेषताओं के अन्तर्गत सबको शिक्षा, अनिवार्य शिक्षा, समानतावादी आधार पर शिक्षा, भेदभाव–रहित शिक्षा, निःशुल्क शिक्षा, आध्यात्मिक शिक्षा, सामाजिक एवं राजनैतिक हस्तक्षेप से रहित शिक्षा, गुरू केन्द्रित शिक्षा, प्राकृतिक पर्यावरण में शिक्षा, आध्यात्मिक शिक्षा, तप एवं ब्रह्मचर्य सहित शिक्षा, एकल लिंगाधारित शिक्षा/सह शिक्षा निषेध एवं ईश्वरीय दिव्य ज्ञान पर आधारित शिक्षा इत्यादि का यहाँ उल्लेख किया जा सकता है जिसकी वर्तमान/आधुनिक युग में नितान्त आवश्यकता भी है।

संदर्भ

1. शर्मा दामोदर एवं हरिश्चन्द्र व्यासः आधुनिक जीवन और पर्यावरण–2003, आरम्भिका एवं पृष्ठ 53–58, 60–68.
2. उपर्युक्त पृष्ठ 87–90.
3. सम्पादकीय आयुर्वेद पर पाबन्दी दैनिक हिन्दुस्तान–16 संस्करण, 5–5–2011
4. डॉ0 आर0 एन0 शर्मा का समकालीन दर्शन एवं केदारनाथ रामनाथ, मेरठ, पृष्ठ–399.
5. बृहदारण्यको–1–3–29, मनुस्मृति अ0 2.5, 2.9
6. श्वेता0 उप0 6–18, मनुस्मृति 1.23, सांख्यसूत्र 5.51, ब्रह्मसूत्र–1.1.3, वैशेषिक सूत्र 1–1–3, पूर्व मीमांसा अ0–1, सू0 18.
7. योगसूत्र–1.26.
8. सरस्वती –महर्षि दयानन्दः सत्यार्थ प्रकाश, उप0 पृष्ठ 31–32.
9. शास्त्री डॉ0 ज्ञानप्रकाश एवं डॉ0 रामनाथ वेदालंकार–'वेदों में शिक्षा शास्त्र के कतिपय सूत्र' पृष्ठ–5
10. उप0 गुरूकुल शिक्षा दर्शन में डॉ0 सोहनपाल सिंह आर्य का लेख गुरूकुलीय शिक्षा का दार्शनिक आधार, पृष्ठ–154.
11. उपर्युक्त पृष्ठ– 145.
12. प्रस्तुत सन्दर्भ में केन्द्र सरकार द्वारा स्वीकृत -Self finace based courses and institutions, NRI Quota and market based education etc. terms and policies उल्लेखनीय है।
13. सरस्वती महर्षि दयानन्दः सत्यार्थ प्रकाशः पृष्ठ 49.
14. यजुर्वेद 26.2.
15. सरस्वती, महर्षि दयानंद, सत्यार्थ प्रकाश, पृष्ठ 26.